भारत की भूसंरचना – एक संक्षिप्त परिचय

बी0 एस0 तिवारी[1] एवं संजय शुक्ल[2]
[1]रिटायर्ड प्रोफेसर एवं अध्यक्ष भूविज्ञान विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ (पंजाब), भारत
bs_tewari@yahoo.com
[2]एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भूविज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कालेज, लखनऊ (उ0प्र0)–226001, भारत
drsanjaygeo@gmail.com

भारत एक विविधता पूर्ण देश है। यहाँ के विभिन्न क्षेत्रों की संस्कृति, भाषा, वेषभूषा, जलवायु और भूसंरचना एक दूसरे से अलग तथा समृद्ध है जिस पर वहाँ की भौगोलिक स्थित का गहरा प्रभाव होता है। भौगोलिक दृष्टि से भारत को हम निम्नलिखित पांच भागों में विभाजित कर सकते हैं। पहला भाग उत्तर के पर्वतीय प्रदेश हैं, जो पश्चिम से पूर्व की ओर समानान्तर उत्तंग श्रेणियों के रूप में फैले हुये हैं इसे एक्स्ट्रा पेनिन्सुलर पार्ट या हिमालय के नाम से जाना जाता है। दूसरा भाग दक्षिण का त्रिभुजाकार प्रायद्वीप या पठार है जो पेनिन्सुलर पार्ट कहलाता है और समुद्र तक फैला है। तीसरा भाग जो पहले दो भागों के मध्य में स्थित है, गंगा जमुना का मैदान या इन्डोगैन्जेटिक प्लेन कहलाता है। चौथा भाग अरब सागर और बंगाल की खाड़ी के किनारे के संकीर्ण समुद्री मैदान हैं जिन्हें वेस्टर्न तथा इस्टर्न घाट कहते हैं। पाँचवा भाग राजस्थान का रेगिस्तान तथा उसके दक्षिण पश्चिम में स्थित कच्छ का रण है। इन पाँचों भागों की भूवैज्ञानिक रचना, उत्पत्ति व वहाँ पाये जाने वाले विभिन्न खनिज पदार्थो का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत है।

सन् 1910 ई0 में अल्फ्रेड वेगेनर ने दक्षिण अमेरिका के पूर्वी तट और अफ्रीका के पश्चिमी तट के रूपों में इतनी समानता पाई कि उसने इन दोनों महाद्वीपों के मानचित्रों को अलग करके एक दूसरे के समीप रखकर मिलाने का प्रयत्न किया और जिसमें वह पूर्णतः सफल रहे। आज से करीब 450 मिलियन वर्ष पहले पेलियोजोइक एरा में सभी महाद्वीप एक साथ इकट्ठे थे जिसे 'पैन्जिया' के नाम से जाना जाता है जो कि एक बड़े महासागर 'पैन्थालासा' द्वारा घिरा हुआ था। इस पैन्जिया के टुकड़ों में विभाजित होने से विभिन्न महाद्वीपों का विकास हुआ। वेगेनर ने इन दोनो महाद्वीपों की भूतकालिक युग की प्राचीन वनस्पतियों और जीव–जंतुओं में, जो इस समय प्रस्तरों में अवशेष या जीवाष्म के रूप में मिलते हैं में गहरी समानता पाई। इसी अनुभव से वेगेनर ने महाद्वीपो के विग्रह का सिद्धान्त (थियोरी ऑफ कांटिनेंटल–ड्रिफ्ट) प्रतिपादित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार अफ्रीका महाद्वीप के पश्चिम में, दक्षिण अमेरिका पूर्व में, मेडागास्कर तथा उत्तर पूर्व में भारत का त्रिभुजाकार प्रायद्वीप और इसके समीप ही आस्ट्रेलिया तथा अन्टार्कटिका के महाद्वीप थे। इन सब प्रदेशों को मिला हुआ भू–भाग गोण्डवाना भूखण्ड के नाम से जाना जाता है। इस भू–खण्ड के उत्तर में इसी प्रकार का एक और भू भाग था जिसे अंगारा भूखण्ड कहते हैं। इन दोनो बड़े भूखण्डों को विभाजित करने वाला जल क्षेत्र टेथिस सागर कहलाया। इसी टेथिस सागर का अवशेष वर्तमान भूमध्य सागर है। सन् 1962 में हेस द्वारा दी गयी समुद्री सतह का विस्तार (सी फ्लोर स्प्रेडिंग) को वाइन और मेथ्यूज(1963) ने अग्रसरित किया जिसके कारण सत्तरवें दशक में मौर्गन(1971), पिचन(1968), डेवी और बर्ड(1970) आदि द्वारा प्रतिपादित प्लेट टेक्टॉनिक्स का सिद्धान्त आया जो महाद्वीपों ओर उसके समुद्री क्षेत्रों के एक साथ 'प्लेट' के रूप में गतिमान होने की पुष्टि करता है। वर्तमान में यह सिद्धान्त भू–विज्ञान में विभिन्न क्रियाओं की विवेचना करने में एक सार्थक भूमिका निभाता है और हमारे हिमालय पर्वत माला की उत्पत्ति जो कि टेथिस सागर के स्थान पर है, पर भी प्रकाश डालता है।

भारत का दक्षिणी प्रायद्वीप पृथ्वी पर पाई जाने वाली प्राचीनतम शिलाओं का बना हुआ है। ये प्रधानतया आग्नेय (इग्नियस) हैं अर्थात किसी समय में भूगर्भ में उष्णता के कारण द्रव (मैग्मा) की शक्ल में थी और जो द्रव के ठंडा होने पर शिलाओं के रूप में परिवर्तित हो गयी होगी। इसमें से कुछ शिलायें पृथ्वी के प्रथम धरातल का अंश हो सकती है। इस क्षेत्र की रचना में परिवर्तित या कायान्तरित(मेटामॉर्फिक) शिलाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान है जो कि आग्नेय और अवसादी (सेडिमेंट्री) शिलाओं से ताप, दाब और समय के कारण कायान्तरित हो जाती है।

भारत का त्रिभुजाकार प्रायद्वीप सर्वदा से स्थल नहीं रहा है। पृथ्वी के इतिहास में कम से कम यह भाग तीन बार जल मग्न हो चुका है और लाखों वर्ष समुद्र की सतह के नीचे रहा है। सम्भवतः दो अरब वर्ष पहले यह भाग पहली बार जलमग्न हुआ था और इसके धरातल पर हजारों फीट ऊँची अवसादी शिलाओं का निर्माण हुआ था। कुछ समय पर्यन्त इन शिलाओं ने धरातल के संकुचन के कारण ऊँची–ऊँची पर्वत श्रेणियों को जन्म दिया और शिलायें पर्याप्त रूप से कायान्तरित हो गयीं। वर्षा, वायु, हिम तथा अन्य प्राकृतिक क्षय(वेदरिंग) करने वाली शक्तियों के कारण मारवाड़ की पहाडियों, नीलगिरी की पहाड़ियों और आरावली की पहाडियों के रूप में रह गयी हैं। यह प्रायद्वीप दूसरी बार संभवतः एक अरब वर्ष पूर्व फिर जलमग्न हुआ और इस बार पहले से कुछ कम समय जल में रहा। इस बार पृथ्वी के धरातल पर एकत्रित रेत आदि ने धरातल के संकुचन के कारण पर्वत श्रेणियों को जन्म दिया जिनके अवशेष कड़प्पा की पहाड़ियाँ हैं।

तीसरी बार यह क्षेत्र सम्भवतः 50–60 करोड़ वर्ष पहले फिर जलमग्न हुआ और इस बार जो शिलायें धरातल पर बनी उनसे विन्ध्याचल पर्वत श्रेणियों का निर्माण हुआ। इस समय यह श्रेणियां पहले के आकार की तुलना में बहुत छोटी रह गयी हैं। विन्ध्याचल पर्वत श्रेणियों के उत्थान के बाद यह प्रायद्वीप फिर कभी भी समुद्र में संपूर्ण रूप से जलमग्न नहीं हुआ। हाँ कभी–कभी कुछ हिस्से खाड़ियों के रूप में स्थल पर आ गये थे तथा स्वच्छ जल के दीर्घाकार जल क्षेत्र समय–समय पर यत्र–तत्र बने जिन्होंने विभिन्न प्रकार की अवसादी शैलों को जन्म दिया और जहाँ विभिन्न प्रकार के जीव और वनस्पतियाँ थे जिनके जीवाश्म आज हमें अवसादी शैलों में मिलते है। उन्हीं कुछ झीलों में समीप के जंगलो की वनस्पति के द्वारा कोयले की शिलाओं का निर्माण हुआ। भारत के प्रायद्वीप में आग्नेय शिलाओं का बाहुल्य है और आग्नेय शिलायें ही मुख्यतया खनिज पदार्थों की उत्पादक है। इस क्षेत्र में

सोना, ताँबा, क्रोमाइट यूरेनियम, लोहा, मैगनीज, एस्वेस्टस, टिन, हीरा, अभ्रक, मैग्नेसाइट, ग्रेफाइट, सीसा, जस्ता, चूना पत्थर, ग्रेनाइट, संगमरमर तथा अन्य इमारती पत्थर पाये जाते हैं। इस क्षेत्र का उत्तरी–पूर्वी भाग जो उडीसा, झारखण्ड प्रान्त के हिस्से हैं खनिजों की बहुलता के कारण भारत का खनिज भण्डार कहलाता है।

लगभग 6–7 करोड़ वर्ष पहले भारत प्रायद्वीप गोण्डवाना भूखण्ड से अलग होकर उत्तर–पूर्व की दिशा में बढ़ने लगा। इसी समय इस क्षेत्र के उत्तरी भाग में ज्वालामुखी से निकले लावे ने प्रायद्वीप के एक बड़े हिस्से को आच्छादित कर दिया। इन ज्वालामुखियों का विस्फोट एक–एक कर बहुत समय तक होता रहा। इस लावे से बनी शिलायें मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा कर्नाटक इत्यादि के प्रदेशों में पाई जाती है और इन्हीं से मध्य प्रदेश के पठार, सतपुडा की पहाडियाँ तथा पश्चिमी घाट को जन्म दिया। इन्हें हम डिक्कन लावा के नाम से जानते हैं। इन्हीं शिलाओं के अपक्षय से मध्य प्रदेश की काली मिट्टी अर्थात रेगुर तथा बाक्साइट जो एलुमिनियम धातु का प्रधान खनिज है, का निर्माण हुआ।

गोंडवाना–भूखण्ड तथा अंगारा भूखण्ड के मध्य के टेथिस सागर का तल अब धीरे–धीरे ऊपर उठने लगा, इसका कारण भारत प्रायद्वीप का गोंडवाना भूखण्ड से प्रथक होकर उत्तर पूर्व की दिशा में बढ़ना था। अंगारा भूखण्ड सम्भवतः दक्षिण की ओर बढ़ रहा था। इन दोनों क्षेत्रों के समीप आने के कारण टेथिस सागर के नर्म तल पर दबाव पड़ने लगा और इस कारण उस पर बड़ी–बड़ी सिमटने या सिलवटे पड़ने लगी। समुद्र तल के उत्थान के कारण जल शनैः–शनैः हटने लगा। दबाव के अधिक बढ़ने पर इन्हीं सिमटनों का आकार बढ़ गया और पर्वत माला का रूप लेने लगा। विभिन्न पर्वत खण्ड स्थानान्तरित हुये और अन्य परिवर्तन दिखने लगे। इस प्रकार अंत में हिमालय पर्वत श्रेणियों का जन्म हुआ। यह दबाव, हिमालय का उठना तथा भारत प्रायद्वीप का उत्तर–पूर्व में बढ़ना अब भी जारी है जिस कारण हिमालय व उसके आसपास के क्षेत्रों में भूकम्प आते रहते है।

जिस समय हिमालय ऊपर उठ रहा था उसके समीप दक्षिणी भाग कुछ नीचे की ओर फैल रहा था और एक बड़ी खाई का रूप ले रहा था। हिमालय के दक्षिण में बनी यह खाई कुछ समयोपरान्त पर्वतीय नदियों द्वारा लाई गयी मिट्टी से पट गयी जिसे हम गंगा जमुना का मैदान कहते हैं। इस मैदान में विभिन्न नदियों द्वारा लाई मिट्टी की गहराई उत्तर में 4000 मीटर तक हो सकती है तथा दक्षिण में यह गहराई बुन्देलखण्ड की तरफ घटती जाती है। इस मैदानी भाग में नीचे विन्ध्य तथा बुन्देलखण्ड की शिलायें मिलती हैं। अवसादी शिलाओं में साधारणतया खनिजों की न्यूनता होती है। भारत में मुख्यतया दो खनिज पाये जाते हैं एक पत्थर का कोयला और दूसरा पेट्रोलियम खनिज तेल। कोयला स्वच्छ जल की अवसादी शैलों में बहुतायत से मिलता है किन्तु समुद्री अवसादी शिलाओं में इसकी कमी रहती है और यह निम्न कोटि का होता है। हिमालय की समुद्री अवसादी शिलाओं में काश्मीर, नेपाल तथा असम में पत्थर का कोयला पाया जाता है।

पेट्रोलियम या खनिज तेल समुद्री अवसादी शिलाओं में मिलता है हिमालय के कुछ क्षेत्रों में ही खनिज तेल पर्याप्त भाग में एकत्रित रह गया है जिसका कारण है शिलाओ पर पड़ने वाला अत्यधिक तनाव। जिसके कारण वहां का खनिज तेल स्थानान्तरित हो गया होगा व कम दबाव वाले क्षेत्रों में एकत्रित हो गया होगा। असम और गुजरात के विभिन्न क्षेत्रों, राजस्थान, हिमांचल, पश्चिमी बंगाल पर गंगा, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी तथा पश्चिमी तट पर मुम्बई हाई से हमे खनिज तेल व प्राकृतिक गैस समुचित मात्रा में मिलती है।

गंगा जमुना के मैदानी क्षेत्रों में खनिज पदार्थों का अभाव है क्योकि खनिज अधिकतर आग्नेय तथा कायान्तरित शैलों में पाये जाते हैं। यहाँ पर रेत कंकड़, मौरंग आदि ही मिलते है। अरब सागर और बंगाल की खाड़ी के समीपवर्ती संकीर्ण तटीय मैदान समुद्री कटाव के कारण बन गये है इस कार्य में वहाँ की नदियों द्वारा लाई हुयी मिट्टी ने भी विशेष सहयोग दिया है। इन क्षेत्रों में खनिज पदार्थों का अभाव है। परन्तु ट्रावनकोर से कुमारी अंतरीप तक समुद्र की रेत में मोनेजाइट नामक खनिज प्रचुर मात्रा में मिलता है यह खनिज समीपवर्ती आग्नेय शिलाओं में अल्प मात्रा में मिलता है तथा वहाँ से नदियों और नालों द्वारा बहकर समुद्र तट पर एकत्रित हो जाता है। इस रेत में लोहे तथा टाइटेनियम के खनिज भी मिलते हैं। मोनेजाइट एक रेडियोएक्टिव खनिज है जिसमे थोरियम पाया जाता है इसका अणुशक्ति के उत्पादन में उपयोग होता है।

राजस्थान की मरूभूमि तथा कच्छ के रण भी भूवैज्ञानिक इतिहास में अल्प अवस्था वाले हैं। इनका निर्माण गंगा जमुना के मैदान के प्रादुर्भाव के पश्चात् हुआ है। इस रेगिस्तान की उत्पत्ति का मूलभूत कारण इस क्षेत्र में वर्षा की कमी तथा तेज वायु का अपने साथ बालू तथा लवण के कणों को अरब सागर तथा कच्छ के रण से उड़ाकर लाना है। मानसूनी हवाओं को रोकने में आरावली की पहाड़ियाँ असमर्थ हैं क्योंकि वे वायु के रूख के सामानान्तर है। वर्षा की कमी के कारण से रेत व नमक बह नही पाता है। इसके अलावा बालू, मिट्टी, गर्म व तेज हवाओ के कारण सूखी शिलाओं का अपक्षय अधिक होता है। राजस्थान में फुलेरा के पास साँभर झील में नमक की उत्पत्ति भी रेगिस्तान से आये नमक कणों से हुई है जो वर्षा तथा वायु के साथ यहाँ जल में एकत्रित हो जाते है। इस रेगिस्तान में रेत की गहराई कहीं कुछ मीटर तो कही अत्यधिक है। मरूभूमि में यहाँ वहाँ आरावली की आग्नेय तथा कायान्तरित शिलायें मिलती है जिसमे अभ्रक, संगमरमर, पन्ना, गारनेट आदि की खाने हैं। जहाँ पर अवसादी शिलायें हैं उनमें कोयला, लिग्नाइट, मुल्तानी मिट्टी, फास्फोराइट, जिप्सम आदि खनिज पाये जाते हैं।

कच्छ का रण समुद्र की सतह से शायद ही कुछ ऊँचा है। यह एक भीषण रेगिस्तान तथा दलदल है जो कुछ हजार वर्षों पूर्व अरब सागर का एक अंग था। आज भी वर्ष के कुछ महीनों में जब तेज पछुआ हवायें चलती है तो अरब सागर का जल यहाँ पर भर जाता है। यहाँ पर जीव–जंतुओं तथा वनस्पतियों की कमी है। सूर्य तप्त मिट्टी एवं नमक के कण दिन में चकाचौंध उत्पन्न करते हैं। खारे पानी की झीलें यहाँ की विशेषता है जो सूखने पर मृगमरीचिका दिखाती है। लूनी तथा बन्नास आदि नदियों की लाई मिट्टी ने अरब सागर की इस उथली खाड़ी को भर दिया है। कुछ समय उपरान्त यह समुद्र सतह से ऊँचा हो जायेगा और गुजरात के मैदान की तरह हो जायेगा।

संदर्भ

1. हेस, एच0 एच0 (1962) हिस्ट्री ऑफ ओशिन बेसिन्स इन पेट्रोलॉजिक स्टडीज : ए वाल्यूम इन ऑनर ऑफ ए0 एफ0 बडिंगटन (सम्पादक), जियोला0 सोसा0 अमे0, मु0 पृ0 599–620।
2. डेवी, जे0 एफ0 तथा बर्ड जे0 एम0 (1970) माउन्टेन बेल्ट्स एण्ड द न्यू ग्लोबल टेक्टानिक्स, ज0 जियोफिस0 रिस0, खण्ड 75, मु0 पृ0 2625–2647।
3. ले पिचन, एक्स (1968) सी फ्लोर स्प्रेडिंग एण्ड कांटिनेन्टल ड्रिफ्ट, ज0 जियोफिस0, खण्ड 73, मु0 पृ0 3661–3667।
4. मॉर्गन, डब्ल्यू0 जे0 (1971 ए) कंवेक्शन प्ल्यूम इन द लोवर मेन्टल, नेचर, खण्ड 230, मु0 पृ0 42–43।
5. मॉर्गन, डब्ल्यू0 जे0 (1971 बी) राइजेज, ट्रेंचेज, ग्रेट फाल्ट्स एण्ड क्रस्टल ब्लॉक्स, ज0 जियोफिस0 रिस0, खण्ड 73, मु0 पृ0 1959–1982।
6. वल्दिया, के0 एस0 (2010) मेकिंग ऑफ इण्डिया, जियोडायनमिक इवोल्यूशन, मैकमिलन, पृ0 816।
7. वाइन, एफ0 जे0 तथा मैथ्यूज, डी0 एच0 (1963) मैग्नेटिक एनामोलीज ओवर ओशियानिक रिजेस, नेचर, खण्ड 199, मु0 पृ0 947–949।